साहित्य अकादेमी महत्तर सदस्यता

SAHITYA AKADEMI FELLOWSHIP

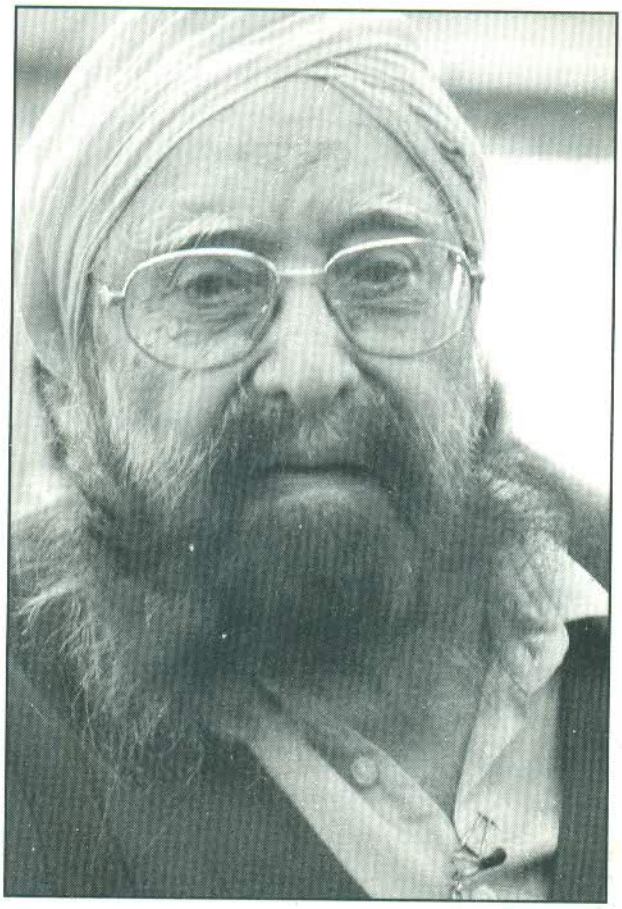

खुशवंत सिंह

KHUSHWANT SINGH

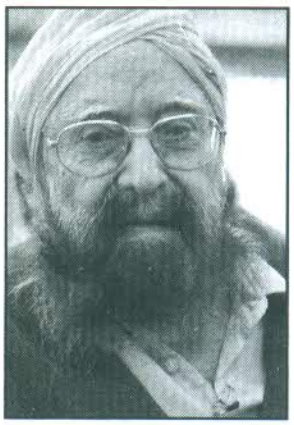

खुशवंत सिंह

KHUSHWANT SINGH

साहित्य अकादेमी खुशवंत सिंह को अकादेमी की महत्तर सदस्यता से सम्मानित करते हुए गौरवान्वित महसूस कर रही है। आप भारतीय अंग्रेज़ी के शीर्षस्थ लेखक और बुद्धिजीवी हैं। साहित्य में पिछले सत्तर वर्षों में आपका विविध-आयामी योगदान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। आप अडिग और प्राय: नृशंसता की हद तक ईमानदार हैं। कथाकार, इतिहासकार, संपादक, विचारक, पत्रकार, हास्य-व्यंग्यकार और समाज समीक्षक डॉ. सिंह का रचना संसार *जपजी साहिब* के उत्कृष्ट अनुवाद और उर्दू की प्रेम कविताओं से लेकर ऐंद्रिक उपन्यासों एवं चुटकुलों की बहुसंख्य पुस्तकों तक विस्तृत है; और वास्तव में एक सच्चे सर्जक के रूप में आपने इन सभी विधाओं में ख़ासी सफलता अर्जित की। आपके स्तंभ 'विद मैलिस टुवर्ड्स वन एंड ऑल' तथा 'दिस एबव ऑल' सर्वाधिक पढ़े जानेवाले स्तंभों में से हैं और आज की भारतीय पत्रकारिता की 'सिंडिकेटिड' रचनाएँ हैं।

खुशवंत सिंह का जन्म पाकिस्तान स्थित पंजाब के सरगोधा ज़िले के हादाली में 2 फ़रवरी 1915 को सर शोभा सिंह एवं वीरन बाई के यहाँ हुआ। आपके पिता एक प्रतिष्ठित भवन-निर्माता थे, जिनकी विरासत लुटियन द्वारा परिकल्पित दिल्ली की अनेक इमारतों के रूप में अब भी मौजूद हैं। आपने दिल्ली के प्रतिष्ठित मॉडर्न स्कूल में शिक्षा पाई, जहाँ आपकी मुलाक़ात कवल (मलिक) से हुई, जो आगे चलकर आप की पत्नी बनीं। यहीं आपको उर्दू में महारत हासिल हुई, जबकि अंकगणित में आप लगातार अनुत्तीर्ण होते रहे। स्कूली शिक्षा के बाद आपने गवर्नमेंट कॉलेज, लाहौर एवं सेंट स्टीफेंस कॉलेज, नई दिल्ली तथा बाद में लंदन स्थित किंग्स कॉलेज एवं इनर टेंपल में शिक्षा प्राप्त की। क़ानूनी शिक्षा प्राप्त करने के बाद आप भारत लौटे तथा 1939 में लाहौर उच्च-न्यायालय में वकालत शुरू की। इसी वर्ष आपने कवल से शादी कर ली। 1947 में भारत-विभाजन के बाद आप स्थायी रूप से दिल्ली में आ बसे और अपने जीवन का अधिकांश समय यहीं बिताया। आपके लेखन में दिल्ली शहर की जीवंत झलकियाँ देखी जा सकती हैं। यह दिलचस्प है कि द *हिन्दू* को 2003 में दिए गए एक साक्षात्कार में आपने कहा कि आपने युवावस्था के अनमोल वर्ष अध्ययन और वकालत में गँवा दिए, जबकि आपकी ज़रूरत कहीं और थी-यह संभवत: आपके पछतावों में से एक है। (एक अन्य पश्चात्ताप के बारे में आपने विनोदपूर्वक बताया था कि भगवान ने आपको छह फ़ुट का नहीं बनाया)।

Sahitya Akademi is proud to confer its fellowship on Khushwant Singh, arguably the foremost Indian writer in English and intellectual whose contribution to the world of letters in the last seventy years is unsurpassed in its range as well as in its unflinching, often brutal honesty. Fiction-writer, historian, editor, opinion-maker, Journalist, satirist, humourist and social commentator, Dr Singh's oeuvre ranges from profoundly moving translations of the *Japji Sahib* and Urdu love poetry to an erotic novel and multiple joke-books! And indeed, he is a true maverick who has achieved a fair degree of success in each of these genres. His columns 'With Malice towards One and All' and 'This Above All' are among the most widely read and syndicated pieces of journalism in India today.

Khushwant Singh was born with the proverbial silver spoon in Hadali, in the Sargodha district of Pakistani Punjab on 2 February, 1915, to Lady Veeran Bai and Sir Sobha Singh. His father was a renowned builder whose legacy remains extant in many buildings of Lutyen's Delhi. He went to Delhi's prestigious Modern School – where he first met his future wife Kaval (Malik) – and here, it seems, he excelled in Urdu while invariably failing arithmetic. After school, he joined the Government College in Lahore and St. Stephen's College, New Delhi, followed by King's College and the Inner Temple, London. Having passed the bar, he returned to India and began his legal practice at the High Court in Lahore in 1939, the year he married Kaval. It was when the Partition intervened in 1947 that he made Delhi his home permanently; he has lived in the capital for most of his life and the city is a living presence in much of his writing. It is interesting that in an interview to *The Hindu* in 2003, he said that the 'precious' years of youth 'squandered' studying and practising law while his calling lay elsewhere, would perhaps count as one of his regrets. (Another regret, he had added jokingly, was not being blessed with a six-foot frame!)

1947 में, खुशवंत सिंह भारतीय विदेश मंत्रालय से जुड़े। आपने क्रमश: कनाडा में प्रेस अताशे और लंदन में जन संपर्क अधिकारी (1948–1951) के रूप में काम किया। बाद में आपने कुछ वर्षों तक आकाशवाणी में कार्य किया और फिर पेरिस में 1954–56 तक यूनेस्को के साथ कार्य किया। लेकिन सरकारी नौकरी में आप स्थिर नहीं रहे; और बहुतों को चकित करते हुए शीघ्र ही आपने विदेश मंत्रालय छोड़ दिया और *योजना* के संस्थापक संपादक बन गए। इसी बीच 1950 में आपकी पहली पुस्तक *द मार्क ऑफ़ विष्णु एंड अदर स्टोरीज़* प्रकाशित हुई, जिसे आलोचकों की पर्याप्त प्रशंसा मिली। यह आज भी भारतीय अंग्रेज़ी साहित्य की महत्त्वपूर्ण कृति बनी हुई है।

1954 में आपका उपन्यास *द ट्रेन टु पाकिस्तान* प्रकाशित हुआ, जो भारतीय अंग्रेज़ी के आरंभिक उपन्यासों में से एक है। यह मनो माजरा नामक एक ऐसे गाँव की सशक्त कहानी है, जो विभाजन की त्रासदी में फँसा हुआ था। इसमें विभाजन की उस त्रासदी का जीवंत वर्णन है, जो संभवत: विगत शताब्दी की एकमात्र भयानक ऐतिहासिक घटना है। पुस्तक को प्रतिष्ठित ग्रोव प्रेस पुरस्कार प्राप्त हुआ। इसके बाद आपकी *द वॉयस ऑफ़ गॉड एंड अदर स्टोरीज़* (1959) और *आई शैल नॉट हियर द नाइटिंगेल* (1959) शीर्षक पुस्तकें प्रकाशित हुईं, जिन्हें काफ़ी प्रशंसा मिली और शीघ्र ही आप भारत के सशक्त मौलिक साहित्यकार के रूप में स्थापित हो गए।

योजना (1956–1958) में कार्य के बाद रॉकफ़ेलर फ़ाउंडेशन एवं मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़ से प्राप्त अनुदान के अंतर्गत आपने *ए हिस्ट्री ऑफ़ द सिख्स* नामक महत्त्वपूर्ण पुस्तक दो खंडों में लिखी। यह पुस्तक आपकी उत्कृष्ट विद्वत्ता और गहन ऐतिहासिक समझ को उजागर करती है। खुशवंत सिंह ने सिखों के राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास पर आगे भी लेखन जारी रखा—कभी-कभी आपकी टिप्पणियाँ विवादास्पद भी रहीं—यद्यपि आपने पगड़ी और दाढ़ी के रूप में एक सिख की अपनी सांस्कृतिक पहचान बनाए रखी है, लेकिन व्यवहार में आप नास्तिक के रूप में जाने जाते हैं।

जब 1969 में खुशवंत सिंह ने *द इलस्ट्रेटेड वीकली ऑफ़ इंडिया* के संपादक का कार्यभार सँभाला, तब यह अपने नब्बे वर्षों की अंग्रेज़ी कुलीनता की विरासत के नीचे दबी नज़र आती थी—जो ब्रिटिशराज के पतन के बाद दुनिया में कहीं भी अस्तित्व में नहीं थी। आपने इसके उस रंग-रूप को उत्साहपूर्वक कुलीन भारतीयता से पूरी तरह से प्रतिस्थापित कर दिया। आपने पत्रिका के संदर्भ में अपनी दृष्टि को अपने स्तंभ लेखों के संग्रह *खुशवंत सिंहस एडिटर्स पेज* (1981) की भूमिका में इस प्रकार रेखांकित किया है:

> अपने दो भारतीय संपादकों के संपादनकाल में *द इलस्ट्रेटेड वीकली* भारतीय संस्कृति का वाहक बन गया था, जिसके अधिकांश पृष्ठ कला, स्थापत्य, शास्त्रीय

In 1947, Khushwant Singh joined the Indian Ministry of External Affairs. Subsequently, he served as the Press Attaché, Canada, and the Public Relations Officer in London (1948–1951). He was with the All India Radio for a couple of years after that and then in Paris, serving with the UNESCO between 1954 and 1956. However, the 'soul-crushing' if stable government job was not indispensable to him and soon enough, to the surprise of many, he quit the MEA to become the founder-editor of *Yojana*. Meanwhile, in 1950, his first book had been published to critical acclaim – *The Mark of Vishnu and Other Stories*. It continues to remain an important text in the Indian English curriculum.

In 1954, his novel *The Train to Pakistan* – a powerful story of a village, Mano Majra, caught in the strife of the Partition, was published and went on to become one of the seminal novels of the Indian-English canon and a telling commentary on the tragedies of the Partition, perhaps the single-most horrifying historical event of the last century along with the Holocaust. The book won, among others, the prestigious Grove Press Award. This was followed by *The Voice of God and Other Stories* (1957) and the critically acclaimed *I Shall Not Hear the Nightingale* (1959), which soon established him as one of India's most powerful and original literary voices.

The stint in *Yojana* (1956–1958) was followed by a grant from the Rockefeller Foundation and the Muslim University, Aligarh, which enabled him to write the monumental 2-volume *A History of the Sikhs*, which is a book of profound scholarship and conveys a deep historical sense. This book remains one of the most sterling contributions to Indian history. Khushwant Singh has continued to engage critically with the political and cultural history of the Sikhs – sometimes attracting a fair degree of controversy with his comments – and though he retains his cultural identity as a Sikh with the turban and the beard, he remains an avowed atheist in practice.

When Khushwant Singh took over as the editor of *The Illustrated Weekly of India* in 1969, it was a magazine that seemed burdened by its legacy of ninety odd years – of a genteel Englishness that no longer existed anywhere in the world after the demise of the Raj, cosmetically replaced by a genteel Indianness that was out of touch with the verve of India as it was in those days. He describes his approach to the magazine in the preface to a collection of columns called *Khushwant Singh's Editor's Page* (1981):

> Under its first two Indian editors [*The Illustrated Weekly*] became a vehicle of

> नृत्य और फूल, चिड़ियों एवं नृत्य करती नृत्यांगनाओं के ख़ूबसूरत चित्रों को समर्पित होते थे। यह विवादास्पद विषयों को स्पर्श नहीं करता था, और पूरी तरह अराजनीतिक और अ-यौन था (कभी-कभी खजुराहो या कोणार्क की धुँधली प्रस्तुतियों को छोड़कर)। अपनी नीरस सम्मान्यता के लिए इसकी अपनी तरह की ख्याति थी। मैंने इस सबको बदल डाला। इसे देखकर पहले ऐसा लगता था कि चार पहियों वाली विक्टोरिया अच्छे कपड़ों में सुसज्जित महिलाओं को भारतीय परिवेश में हवाख़ोरी के लिए ले जा रही है; मैंने इसे सूचना, विवाद और मनोरंजन का गुलगपाड़िया जेट चालित वाहन बना दिया। मैंने कुलीनता के अलिखित नियमों की धज्जियाँ उड़ा दीं—दृश्य और भाषा, दोनों ही स्तरों पर और धीरे-धीरे प्रसार संख्या बढ़ती गई; और *इलस्ट्रेटेड* देश के तथाकथित अभिजात अंग्रेज़ी पाठकों की साप्ताहिक आदत बन गया। यह एशिया (जापान को छोड़कर) में सबसे ज़्यादा पढ़ा जानेवाला पत्र बन गया, क्योंकि यह राजनीति, अर्थ, धर्म और कला के प्रत्येक आधारभूत विषय पर सभी तर्क-वितर्क वाले विचार-बिंदुओं को प्रकाशित करता था।

उक्त परिच्छेद के संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि यह मौलिकता और ऊर्जस्विता के साथ ज्ञान-प्रसार और भारतीय स्वभाव की पत्रकारिता के जन्म की कहानी कहता है, दुर्भाग्य से उस औपनिवेशिक मॉडल की छाया प्राय: भारतीय विमर्श पर आज भी दिखाई पड़ती है। जिस दशक में खुशवंत सिंह *वीकली* के संपादक थे, उसकी प्रसार संख्या 80,000 से 4,80,000 तक पहुँच गई। यह विस्मयकारी उपलब्धि आपके उस कौशल का परिणाम थी, जिसमें आपने सूचनाओं को मनोरंजन और वाद-विवाद की चाशनी में लपेटकर प्रस्तुत किया। *आउटलुक* को दिए गए एक साक्षात्कार में आपने अपनी अग्रगामी संपादकीय पद्धति की व्याख्या की है, जो किसी विदेशी मॉडल से नहीं निकली है। जैसा कि आपने शीला रेड्डी को बताया :

> यह अनूठे तौर पर भारतीय मॉडल है। लोगों को जानकारी दें, क्योंकि मुझे भी पूरी-पूरी जानकारी नहीं थी; और जैसा मुझे लगता है, दूसरे भारतीय भी ऐसा ही महसूस करते हैं। जी बहलाएँ, क्योंकि मैं एक विदूषक था... और चिढ़ें, क्योंकि भारतीय मानसिक रूप से इतने आलसी हैं कि यदि आप कुछ अनोखा कहते हैं, तो वे नाराज़ हो जाते हैं और फिर प्रतिक्रिया देते हैं।

पत्रकारिता और साहित्य दोनों ही क्षेत्रों में खुशवंत सिंह का योगदान निरंतर अक्षुण्ण रहा है और समृद्धतर होता गया है। *आप द हिन्दुस्तान टाइम्स*

> Indian culture devoting most of its pages to art, sculpture, classical dance and pretty pictures of flowers, birds, and dancing belles. It did not touch controversial subjects, was strictly apolitical and asexual (save occasional blurred reproductions of Khajuraho or Konarak). It earned a well-deserved reputation for dull respectability. I changed all that. What was a four-wheeled victoria taking well-draped ladies out to eat the Indian air I made a noisy rumbustious, jet-propelled vehicle of information, controversy and amusement. I tore up the unwritten norms of gentility, both visual and linguistic... And slowly the circulation built up, till the *Illustrated* did become a weekly habit of the English-reading pseudo-elite of the country. It became the most widely read journal in Asia (barring Japan) because it reflected all the contending points of view on every conceivable subject: politics, economics, religion, and the arts.

What is remarkable about this passage is that it chronicles the birth of an Indian ethos of journalism and knowledge dissemination, marked by originality and dynamism, as opposed to a derivative colonial model that has, unfortunately, continued to cast its shadow on much of Indian discourse even today. In the decade that Khushwant Singh was at the helm of the *Weekly*, circulation went up from 80,000 to 4,80,000 – an astounding achievement owing to his dexterous mix of information with entertainment and debate. In his interview to *Outlook*, he elaborated upon his pioneering editorial methodology which was not at all derived from any 'foreign' model. It was, he told Sheela Reddy:

> [A] uniquely Indian model. Inform, because I was not fully informed and I felt other Indians must feel the same. Amuse, because I was a joker... And provoke, because Indians are so sluggish in their minds that if you say something outlandish, they get angry and then they react.

His contribution to both the world of journalism and the literary sphere has continued unabated over the years, growing in richness. He has been the editor

(1980-1983) के संपादक बने और सभी राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय दैनिकों के लिए लिखा, जिनमें *न्यूयार्क टाइम्स, आब्ज़र्वर, न्यू स्टेट्समैन* और *हार्पर्स* शामिल हैं। आपकी अप्रतिम और बहुपठित-बहुचर्चित पुस्तकें हैं— *देलही : ए नॉवेल* (1990), *इन द कंपनी ऑफ़ वुमैन* (सेक्स, प्यार और आवेग पर केंद्रित उपन्यास, 1999) से लेकर *जपजी साहिब* (गुरु नानक के गीतों की उत्कृष्ट प्रस्तुति) और भगवद्गीता की व्याख्या तक; मिर्जा हादी रुसवा के उपन्यास *उमराव जान अदा* से लेकर अमृता प्रीतम के *पिंजर* के अंग्रेज़ी अनुवाद तक; सिख इतिहास पर सशक्त कृति- *रणजीत सिंह : द महाराजा ऑफ़ पंजाब* (1963) से लेकर *ट्रेजिडी ऑफ़ पंजाब* (1984) तक — और आत्मकथात्मक लेखन, विवादास्पद आत्मकथा *ट्रुथ, लव एंड ए लिट्ल मैलिश* तथा अद्यतन कृति *व्हाय आई सपोर्टेड द इमरजेंसी एंड अदर एस्सेज़* (2009)।

1980 से 1986 तक आप राज्यसभा के सदस्य रहे और वृक्षारोपण के लिए लोगों को प्रेरित किया।

1974 में भारत सरकार द्वारा आपको प्रतिष्ठित पद्मभूषण अलंकरण से विभूषित किया गया था, जिसे आपने 1984 में ऑपरेशन ब्लू स्टार के विरोध स्वरूप लौटा दिया था। 1999 में जब सिखों द्वारा खालसा की स्थापना की त्रिशतवार्षिकी आनंदपुर साहिब में मनाई गई, तब आपको निशान-ए-खालसा से सम्मानित किया गया, जो सिख समुदाय का सर्वोच्च सम्मान है। उसी वर्ष आपको गुरु नानक देव विश्वविद्यालय द्वारा मानद डी.लिट्. की उपाधि प्रदान की गई। 2007 में आपको भारत के दूसरे सबसे बड़े नागरिक सम्मान 'पद्मविभूषण' अलंकरण से विभूषित किया गया। सुलभ इंटरनेशनल द्वारा वर्ष 2000 में आपको 'वर्ष का ईमानदार आदमी' सम्मान प्रदान किया गया।

वास्तव में, साहित्य की दुनिया में ईमानदारी एक ऐसी अवधारणा है जिसे कम महत्त्व दिया गया है;, लेकिन यह आलोचनात्मक परख की तीखी झुलसा देनेवाली ईमानदारी और हिम्मत ही है कि खुशवंत सिंह ने अपनी लंबी और विशिष्ट साहित्यिक यात्रा में अपनी विद्वता, अंग्रेज़ी भाषा-कौशल, अपने लेखन में विशिष्ट मुहावरों वाली भारतीय अंग्रेज़ी भाषा के आविष्कार और गहन इतिहास-बोध से अपनी सभी कृतियों को अनुप्राणित किया है और उन्हें ललित कला के मक़ाम तक पहुँचाया है। वास्तव में, भारतीय साहित्य के इस वरिष्ठतम शख़्सियत को महत्तर सदस्यता से विभूषित कर, साहित्य अकादेमी स्वयं को ही सम्मानित कर रही है।

of the *Hindustan Times* (1980–1983) and written for all the national and international dailies, including *The New York Times, Observer, New Statesman* and *Harpers*. His books – ranging from the unique *Delhi: a Novel* (1990) and *In the Company of Women* (a novel on sex, love and passion) (1999) to his fine renderings of the *Japji Sahib*, the songs of Guru Nanak and a commentary on the *Bhagawat Gita*, translations ranging from Mirza Hadi Ruswa's *Umrao Jan Ada* to Amrita Pritam's *Pinjar*, the powerful works on Sikh history – *Ranjit Singh: the Maharajah of Punjab* (1963) to *Tragedy of Punjab* (1984) – and his autobiographical writings, the controversial autobiography *Truth, Love and a Little Malice* to the latest *Why I Supported the Emergency and Other Essays* (2009) have been published all over the world to acclaim and popularity and continue to sell steadily.

Between 1980 and 1986 he remained a member of the Rajya Sabha and took up tree-planting as one of his favourite causes.

In 1974, the Government of India had awarded him the prestigious Padma Bhushan Award, which he returned in 1984 in protest against Operation Blue Star. In the year 1999, when Sikhs celebrated the 300th year of the Khalsa at Anandpur Sahib, he was honored with 'Order of Khalsa' (Nishaan-e-Khalsa), the highest decorum bestowed upon by the Sikhs community. In the same year, he was also awarded an honorary doctorate by Guru Nanak Dev University. In 2007, the Padma Vibhushan, India's second highest civilian award, was accorded to him. Another very appropriate award accorded to him was Sulabh International's 'Honest Man of the Year' that he won in the year 2000.

Indeed, honesty is perhaps an underrated idea in the world of letters but it is this sharp searing honesty and spirit of critical enquiry that Khushwant Singh has elevated to a fine art in his long and distinguished literary career, alongside his scholarship, his finesse with the English language, his invention of a uniquely Indian-English idiom in his writing, and the profound historical sense that infuses all his work. Indeed, in honouring the grand old man of Indian letters as its fellow, it is really the Sahitya Akademi that honours itself.